International Journal of Multidisciplinary ResearchAnd Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 9; September 2016; Page No. 342-343

अनेकांत : सर्वांगीण दृष्टि

डॉ0 शंभू जोशी

असिस्टेंट प्रोफेसर, दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, भारत।

सारंश

एक बहुलतापूर्ण समाज में एक–दूसरे के प्रति सम्मान एवं सहिष्णुता अनिवार्य है। भारत जैसे विभिन्नतापूर्ण समाज में आवश्यक है कि हर दृष्टिकोण को जाना, समझा जाए और उसे सम्मान दिया जाए। भारत की सम्मिश्रित संस्कृति में ऐसे अनेक तात्विक चिंतन मौजूद हैं जो हमें वर्तमान की समस्याओं को दूर करने का उपाय सुझा सकते हैं। जैन दर्शन का अनेकांतवाद ऐसा ही चिंतन है जो हमें दार्शनिक स्तर से व्यावहारिक जीवन में सह–अस्तित्व एवं समन्वय की सीख प्रदान करता है। अनेकांतवाद हमें यह दृष्टि प्रदान करता है कि विभिन्न विचारों, मतों, संस्थानों।

मूल शब्द: जैन दर्शन, सापेक्षिकता, समग्रता, लोकतंत्र, सह–अस्तित्व।

प्रस्तावना

अनेकांत जैन दर्शन की विश्व को मौलिक देन है। जैन दर्शन मानता है कि वस्तु बहुआयामी है, उसमें परस्पर विरोधी अनेक गुण–धर्म हैं, किंतु प्रायरू लोग अपनी एकांगी दृष्टि से वस्तु का समग्र बोध नहीं कर पाते। जबकि अनेकांतवाद ऐसा सिद्धांत है जो वस्तुतत्व को उसके सकल रूप के साथ देखने का प्रस्ताव करता है। अनेकांत की विशिष्टता भी यह है कि वह वस्तु के बहुआयामी गुण–धर्मों में समन्वय एवं सहअस्तित्व की सृजनात्मक भूमिका को स्वीकार करता है। अनेकांत समन्वय का श्रेष्ठ मार्ग अपनाता है। वह सबकी बात सहिष्णुतापूर्वक सुनने और अन्य के दृष्टिकोण को समझने का प्रस्ताव करता है। इसीलिए अनेकांत एक जीवन दर्शन भी हो जाता है।

हर व्यक्ति, समूह, धर्म,विचार,जाति आदि अपने स्वार्थ और हित की बात सोचता है और अन्य के हित और स्वार्थ को नजरअंदाज करता और कम तरजीह प्रदान करता है।इसी का प्रकटीकरण संघर्ष, कलह और युद्ध के रूप में होता है। अतरू आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न विरोधी हितों के द्वंद्व को समाप्त किया जाए। वस्तुतरू ये परस्पर विरोधी हित वास्तव में विरोधी नहीं होते अपितु मिथ्या दृष्टि के आधार पर ऐसा करते हैं और अपनी दृष्टि को ही पूर्ण मानते हैं। जबकि दूसरी ओर एक सम्यक दृष्टि परस्पर विरोधी लगने वाले विचारों को भी पूरक बनाती है, अनेकांत यही प्रक्रिया है। एक सम्यक दृष्टि का विकास अनेकांत के बिना संभव नहीं है क्योंकि यह दृष्टि हर विचार,वस्तु को सापेक्षिक एवं अपूर्ण मानती है। यहां अपूर्णता का अस्वीकार नहीं बल्कि पूर्णता के सत्यांश के रूप में अपूर्णता का स्वीकार है।

आचार्य महाप्रज्ञ (2010 : 58–62) ने अनेकांत को बताते हुए कहा कि दृ

एक पर्याय दृ एक विचार को समग्र मान लेना, निरपेक्ष मान लेना एकांतवादी दृष्टिकोण है। एक विचार को अपूर्ण और सापेक्ष मान लेना अनेकांतवादी दृष्टिकोण है। सम्यक दर्शन का विकास अनेकांत दृष्टि के आधार पर हो सकता है। अनेकांत की मौलिक दृष्टियां दो हैं दृ निरपेक्ष और सापेक्ष। अस्तित्व का निर्धारण करने के लिए निरपेक्ष दृष्टि का प्रयोग करना चाहिए। संबंधों का निर्धारण करने के लिए सापेक्ष दृष्टि का प्रयोग करना चाहिए।

वस्तुतरू हमारे सामाजिक जीवन का आधार यही सापेक्षिक दृष्टि है। इसी आधार पर हम स्व–पर के बीच की अन्तर्क्रिया को समतापूर्ण और सम्मानजनक बना सकते हैं जहां हर व्यक्ति और उसके विचार का स्वीकार है। हम जाति, धर्म,लिंग, वर्ग,क्षेत्र आदि के आधार पर सापेक्षिक है परंतु मनुष्य रूप में एक समान यानि निरपेक्ष है।मनुष्य रूप में हमारे हित समान है। समाज के विभिन्न वर्गों के हित सापेक्ष है। सापेक्षिकता के आधार पर ही विरूद्ध हितों में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। हम अपने दृष्टिकोण के साथ–साथ अन्य के दृष्टिकोण को स्वीकार करे और दोनों दृष्टिकोण के सत्यांश को स्वीकार कर कार्य करें तो सामाजिक जीवन फलितार्थ हो सकेगा। ऐसा करते हुए जब हम 'आत्म रूपी स्व' और 'अन्य रूपी स्व' के भेद को मिटा रहे होते हैं तो इस एक मानवीय संस्कृति का निर्माण कर रहे होते हैं (आचार्य, 2007 : 166–168)। इस दृष्टि से अनेकांत एक सांस्कृतिक प्रक्रिया भी हो जाती है। यहां संस्कृति का अर्थ स्व और अन्य के भेद को मिटाना हो जाता है और सम्पूर्ण मानवीय क्रियाकलाप इसी प्रक्रिया के साधन हो जाते हैं। इस प्रकार संस्कृति स्व के साथ अन्य के स्वीकार की प्रक्रिया भी है जो अनेकांत का उद्देश्य भी है।

समन्वय सामाजिकता का मूल आधार है। सामाजिकता परस्पराश्रित जीवन ही है। हमारी आपसी पारस्परिकता और अन्तर्क्रिया ही हमें एक–दूसरे के साथ जीवन जीने का अवसर देती है। हर समाज में विभिन्न अंतर होते हुए भी हर व्यक्ति अपनी जाति, धर्म, भाषा, लिंग आदि विभिन्नताओं को अतिक्रमित कर अन्य जाति, धर्म, भाषा, लिंग आदि के व्यक्ति से अन्तर्क्रिया कर एक सहजीवन का मार्ग प्रशस्त करता है। यह समन्वय इस धारणा से उत्पन्न होता है कि जिस तरह मुझे जीवन जीने और विचार करने की स्वतंत्रता मुझे है, समाज के दूसरे लोगों को भी वही स्वतंत्रता प्राप्त है। यह स्वीकार्य ही समन्वय का आधार है और दूसरे अर्थों में मनुष्य होने के उत्तरदायी बोध का भी। अनेकांत इस समन्वय और सह–अस्तित्व को पुष्ट करता है। अनेकांत का एक अभिप्राय सह–अस्तित्व भी है। जिस तरह विपरीत लक्षण (प्रकाश–अंधेरा, नित्य–अनित्य) एक साथ रहते हैं उसी प्रकार का सह–अस्तित्व समाज में विद्यमान विभिन्न विचारों, लोगों के बीच भी रह सकता है। एकांतवाद वहां उत्पन्न होता है जहां केवल 'मैं' की अवधारणा होती है और संघर्ष का बीज भी यही से उत्पन्न होता है। अनेकांत 'मैं' पर नहीं 'हम' पर जोर देता है।

वर्तमान लोकतांत्रिक जीवन में समन्वय और सह–अस्तित्व लोकतंत्र को संवर्धित करने का आधार है। लोकतंत्र का अर्थ ही अन्य की

स्वतंत्रता का स्वीकार हो जाता है। एक तरह से लोकतंत्र को अनेकांत का व्यावहारिक रूप भी कहा जा सकता है। जहां आप अपने विचार के साथ–साथ अन्य विचारों को भी सम्मान देते हैं और निर्णय में भागीदार बनते है। लोकतंत्र भी अनेकांत की तरह असमानता में समानता के सूत्र को खोजने और स्वीकारने का प्रयास है। एक लोकतांत्रिक जीवन शैली को अनेकांतवादी शैली भी कहा जा सकता है।

अनेकांत का आग्रह है कि व्यक्ति इस बात को स्वीकार करे कि सत्य के कई रूप हो सकते हैं जिस तरह एक व्यक्ति का सत्य है, उसी तरह दूसरे व्यक्ति का भी सत्य है और वह भी उतना ही महत्वपूर्ण है। समाज तभी टिका रह सकता है जब हम एक दूसरे के सत्यांशों के प्रति अपना सम्मान प्रकट करें और सामूहिक जीवन को प्रेरित करने वाली गतिविधियों में प्रवृत्त हों।

प्रो.सागरमल जैन (2002 : 64–65) ने अनेकांत का मूल प्रयोजन 'सत्य को उसके विभिन्न आयामों में देखने, समझने और समझाने का प्रयास करना' बताया है। उन्होंने अनेकांतवाद के तीन कार्य बताएं है जो काफी महत्वपूर्ण हैं दृ

1. प्रत्येक दार्शनिक अवधारणा के गुण–दोषों की समीक्षा करना और इस समीक्षा में देखने का प्रयत्न करना कि उसकी हमारे व्यावहारिक जीवन में क्या उपयोगिता है?
2. प्रत्येक दार्शनिक अवधारणा की सापेक्षिक सत्यता को स्वीकार करना और यह निश्चित करना कि उसमें जो सत्यांश है, वह किस अपेक्षा दृ विशेष से है?
3. अनेकांत का तीसरा महत्वपूर्ण कार्य विभिन्न ऐकांतिक मान्यताओं को समन्वय के सूत्र में पिरोकर उनके एकांतरूपी दोष का निराकरण करते हुए उनके पारस्परिक विद्वेष का निराकरण कर उनमें सौहार्द और सौमनस्य स्थापित करवा देना है।

अनेकांत की प्रासंगिकता को एक कल्पित उदाहरण से समझा जा सकता है। भारत जैसे बहुलधर्मी देश में धर्म के संबंध में एकांतवादी दृष्टि हर धर्म के अनुयायी को अपने ही धर्म के सत्य को एकमात्र अंतिम सत्य मानने को कहती है। अपने धर्म का सत्य ही एकमात्र सत्य है अतएव अन्य धर्म हीन है और अन्य धर्मावलंबियों को एकांतवादी के धर्म का ही पालन करना चाहिए।एकांतवादी दूसरों को इसके लिए बाध्य भी कर सकता है। वहीं दूसरी ओर अनेकांतवादी दृष्टि को मानने वाला अपने धर्म के सत्य को भी सत्य का अंश मानता है। अपने से इतर अन्य धर्म को भी उसी तरह सत्य का अंश मानता है जो उस धर्म के अनुयायियों ने अपने अनुभव से प्राप्त किया है। ऐसा करते हुए अनेकांतवादी अन्य धर्मों के अनुयायियों के विश्वास को सम्मान देता है। वह अपने से इतर धर्म को हीन नहीं मानता अपितु उस धर्म और उनके अनुयायियों का सम्मान करता है। यह एक सहअस्तित्वपूर्ण जीवन की ओर ले जाता है। यह स्पष्ट है कि धर्मबहुलता में एकांतवादी दृष्टि हमें हिंसा और विनाश की ओर तथा अनेकांतवादी दृष्टि सामंजस्य और सौहार्द की ओर ले जाती है। भारत जैसे देश में इसलिए अनेकांतवादी दृष्टि की प्रासंगिकता स्वतरू स्पष्ट हो जाती है।

अनेकांतवादी दृष्टि एक वैज्ञानिक दृष्टि भी है। प्रो. अल्बर्ट आइंस्टीन का सापेक्षिकता का सिद्धांत ज्ञान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस सापेक्षिकता के सिद्धांत के आधार पर प्रो. आइंस्टीन ने प्रस्ताव किया कि एक वस्तु सत्य हो सकती है परंतु पूर्ण सत्य नहीं हो सकती है। हम सिर्फ सापेक्षिक सत्य का ही जान सकते हैं, निरपेक्ष सत्य को सिर्फ विश्व के सर्वज्ञ (सर्वज्ञाता) ही जान सकते हैं (one thing may be true but may not be real true- We can only know relative truth- The Absolute truth is only known by Universal observer) (जैन : 2014)। ठीक इसी तरह अनेकांत दृष्टि भी सापेक्षिक सत्य का स्वीकार करने का आग्रह करती है। अनेकांत दृष्टि जीवन के समस्त पहलुओं और संभावनाओं को स्वीकारने का दर्शन है। हमारे अनुभव और विचारों के कई आयाम और प्रस्थान बिंदु हैं। हर व्यक्ति का सत्य उसके सत्य का अनुभव है ठीक वैसे ही जैसे दूसरे व्यक्ति का सत्य उसके अनुभव का सत्य है अतएव एक दृदूसरे के सत्यांश का स्वीकार ही परस्पराश्रित जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है। इस संबंध में दिक्कत तब पैदाहोतीहै जब अपने अनुभव को ही सत्य माने और अन्य के अनुभव को खारिज करें। एक दृष्टि से यह अनैतिक साथ ही साथ अवैज्ञानिक दृष्टि कही जा सकती है।

वर्तमान हिंसाग्रस्त समय में अनेकांत हमें यह अवसर प्रदान करता है कि हम अपने स्वार्थों और हितों से आगे बढ.कर अन्य के दृष्टिकोण को स्वीकार करे, आपसी संवाद करें और समन्वय एवं सह–अस्तित्व की अवधारणा के लिए कार्य करें। जिन समस्याओं, संकटों और युद्धों से हम जूझ रहे हैं उनके निराकरण के लिए अनेकांत सबसे पहले एक–दूसरे के नजरिए को समझने का प्रस्ताव करता है जो किसी भी समस्या के समाधान की प्रथम सीढ़ी है। अगर हमें एक हिंसामुक्त, शोषणमुक्त समाज का निर्माण करना है तो अनेकांत हमें उसकी प्रविधि प्रदानकरता है। अब यह हम पर निर्भर है कि हम इस प्रविधि का प्रयोग कर किस सीमा तक मानवता, लोकतंत्र और अस्तित्व को बचा पाते हैं ?

संदर्भ ग्रंथ

1. आचार्य महाप्रज्ञ (2010). अनेकांत. अहिंसा विश्वकोश (सं. नन्दकिशोर आचार्य). जयपुर रू प्राकृत भारती अकादमी.
2. आचार्य महाप्रज्ञ (अप्रैल 2001). नय,अनेकांत और स्याद्वाद. जैन भारती.वर्ष 49. अंक 4. बीकानेररू जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा.
3. आचार्य, नन्दकिशोर (2007). संस्कृति की सभ्यता. बीकानेररू वाग्देवी प्रकाशन.
4. जैन,प्रो. सागरमल (मार्च–मई 2002). अनेकांत रू सत्य के खोज की व्यावहारिक पद्धति. जैन भारती (अनेकांत विशेष). वर्ष 50. अंक 3–4–5. बीकानेररू जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा.
5. जैन, राकेश कुमार (2014). अनेकांत का वैज्ञानिक दृष्टिकोण. http://jainisimusa.blogspot.in/2014/06/absolute-of-relativityproffesor-albert.html (access on 03/09/2015)
6. पटवा, शुभू (संपा.) (मार्च–मई 2002). जैन भारती (अनेकांत विशेष). वर्ष 50. अंक 3–4–5. बीकानेररू जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा.